गरीबी और प्रधानमन्त्री मोदी

विकास नारायण राय

भाजपा संसदीय दल का नेता चुने जाने की औपचारिकता के बाद मोदी ने संसद के केन्द्रीय हाल से सम्बोधन में अपनी सरकार को गरीबों, युवाओं और स्त्रियों को समर्पित करार दिया। कार्पोरेट जगत और राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के चहेते 'चायवाले' के लिए इस दिखावे को अधिक दिनों तक निभाना टेढ़ी खीर ही होगी। गरीबों को लेकर मोदी का नव-उदारवादी ट्रैक रिकार्ड सर्वाधिक संदेहास्पद रहा है। हालांकि युवाओं में आज उनकी छवि आशा और विश्वास देनेवाले एक राष्ट्रवादी नेता की जरूर है पर इस समीकरण की सेहत के लिए रोजगार के अवसरों और लोकतांत्रिक गतिशीलता का वांछित ब्लूप्रिंट उनके आर्थिक-सामाजिक क्षितिज से नदारद है। जबकि स्त्रियों के लैंगिक उत्पीड़न में बदलाव को लेकर मोदी घिसे-पिटे मर्दवादी जीवन मूल्यों और विफल सामंती पहलों से यथास्थिति के ही पक्षधर नजर आते हैं।

गुजरात विकास माडल के मिथक के जनक नरेन्द्रभाई को अपने राज्य में गरीबी दिखना अरसे से बंद हो चुकी है। चुनाव 2014 की चार सौ जनसभाओं में उन्होंने गुजरात माडल का तमाम पहलुओं से जिक्र किया होगा पर भूले से भी गरीबी की वजहों की चर्चा नहीं की। लोकसभा की जंग जीतने के बाद जब वे अपनी विजय-यात्रा के समापन पर काशी के लोगों का धन्यवाद करने गए तो वहां भी उन्हें गन्दगी तो नजर आयी पर गरीबी नहीं। बनारस की गलियों में साफ-सफाई के एजेंडे को लेकर वे नाम महात्मा गांधी का लेते रहे पर लहजा उनका संजय गांधीवाला रहा - शासकों की आँखों में गन्दगी में लिथड़े गरीब तो गड़ते हैं पर गरीबी की जड़ें नहीं। गंगा के इस स्वघोषित बेटे को भी विदेशी पर्यटकों के सौन्दर्य-बोध की चिंता रही और सफाई में सिंगापुर का स्तर छूने की ललक दिखी। पर प्रदूषण के लिए बजाय कार्पोरेट लालच को जवाबदेह ठहराने के उसने बनारसी जीवन-शैली पर ही तंज कसा।

लगे हाथों गंगा आरती के मंच से मोदी ने अपना 'ऐतिहासिक' एजेंडा भी रेखांकित किया - देश के लिए मर नहीं सके तो क्या, जीकर देश-सेवा करेंगे। बताया कि गुजरात का मुख्यमंत्री बनने पर वे शहीद श्यामजी वर्मा की अस्थियाँ विलायत से स्वदेश लाये थे, अब भारत का प्रधानमंत्री बन गंगा का उद्धार करेंगे - दावा किया कि नियति को इन पुनीत कार्यों के लिए उनकी ही प्रतीक्षा थी। मोदी ने वाराणसी में नए उद्योगों के माध्यम से रोजगार लाने का जिक्र किया पर वहां के लाखों मुस्लिम बुनकरों के बिचौलियों और व्यवसाइयों द्वारा रोज होनेवाले शोषण पर चुप रहे। उन्होंने शहर के इस चेहरे से भी अनभिज्ञ रहना ठीक समझा कि बनारस पारंपरिक रूप से भिखारियों और वेश्याओं का भी ठिकाना रहा है। दशाश्वमेध घाट पर भी, जहां से मोदी बोल रहे थे, सुबह-शाम भिखारियों की लम्बी कतारें लगती हैं और शहर की दालमंडी के वेश्यालयों की विरासत चंद किलोमीटर पर शिवदासपुर में गुलजार है।

गुजरात के वदोदरा (मोदी का दूसरा चुनाव क्षेत्र) और सूरत जैसे औद्योगिक-व्यावसायिक शहरों का कारोबार, पूर्वी उत्तर प्रदेश और बिहार, जिनकी पचास लोकसभा सीटों के मद्देनजर मोदी ने वाराणसी से चुनाव लड़ा, के लाखों विस्थापित मजदूरों-कारीगरों के दम पर चल रहा है। काशी के विजय उद्घोष में वे इलाके की गरीबी का यह पहलू भी गोल कर गए। यानी सबसे सनातन सामाजिक बीमारी - गरीबी -और उसके सर्वाधिक उपेक्षित लक्षणों - भिखारी, वेश्या और विस्थापित - का प्रधानमंत्री मोदी के लिए जैसे कोई अस्तित्व ही न हो!

मोदी ने 125 करोड़ भारतीयों को लेकर एक गरीबपरवर सपने की बात जरूर की। सबका अपना एक शौचालय-युक्त घर हो जिसमें 24 घंटे पानी और बिजली की सुविधा हो! निश्चित ही इस व्यक्ति के अन्दर अपने गरीबी के दिनों की टीस बची है। क्या इतना काफी है? ध्यान रहे कि मोदी ने चुनाव प्रचार में सौ नए आधुनिक शहर बनाने की बात बार-बार दोहराई है। यह रीयल स्टेट के मगरमच्छों की खातिर सरकारी खजाने खोलने की भूमिका है। हरेक को घर देने की जुगत को अंततः राष्ट्रीय बैंकों की मार्फत किसी ऐसी योजना से नत्थी किया जाएगा जो हरेक को कर्ज से लाद देगी। कौन नहीं जानता कि जिस तरह रीयल स्टेट का व्यवसाय देश में चलाया जा रहा है उसने अर्थव्यवस्था में काले धन की बाढ़ ला दी है, और एक अदद घर का सपना आम आदमी की आमदनी की पहुँच से बाहर कर दिया है। बेहद कम खर्चीला और आसान विकल्प होगा कि गाँवों में ही जीवन की आधुनिक सहूलियतें और रोजगार के भरपूर अवसर पहुंचा, जायं जिससे शहरों में अमानवीय पलायन रुके। पर यह, मोदी भी मानेंगे, कार्पोरेट मुनाफाखोरों को मंजूर नहीं।

दरअसल मोदी के जिस हिन्दुत्ववादी भूत की आशंका पर उनके विरोधियों ने चुनाव प्रचार में इतना ध्यान केन्द्रित किया, वह उनके कार्पोरेट वर्तमान और फासीवादी भविष्य के खतरों के सामने फीका ही कहा जाएगा। यह स्पष्ट है कि बिना इस वर्तमान और भविष्य की

गरीबी पर मोदी का गुजरात का ट्रैक रिकार्ड क्या है? राज्य के अपने आंकड़ों के अनुसार इन बारह वर्षों में गाँवों में गरीब परिवारों की संख्या उन्तालीस प्रतिशत बढ़ी है। करीब चालीस लाख गरीबी रेखा के नीचे के परिवारों में से नौ लाख शहरों में हैं। सूची में गाँव और शहर में क्रमशः ग्यारह और सत्रह रुपया प्रतिदिन से कम कमानेवाले ही शामिल हैं, जबकि योजना आयोग के नए मानक में यह गणना क्रमशः बत्तीस और अड़तीस रुपये पर होनी चाहिए थी। गरीब पर व्यापकतम मार मंहगाई और भ्रष्टाचार की होती है। मोदी के लम्बे शासन काल में गुजरात में मंहगाई बाकी देश की तरह ही बढ़ती रही। अम्बानी की गैस के दाम को सोनिया-मनमोहन के तेल मंत्री मोइली ने चार गुणा किया तो मोदी की गुजरात सरकार ने लगभग आठ गुणा करने की अनुशंसा की। यहाँ तक कि दूध, खाद्य तेल, बिजली जैसी आम जरूरी चीजों की कीमतें स्वयं राज्य सरकार ने बार-बार बढ़ाईं। मोदी शासन के दौर में गुजरात का एक भी बड़ा नेता, वरिष्ठ अधिकारी या प्रमुख पूंजीशाह नहीं मिलेगा जिस पर राज्य की भ्रष्टाचार निरोधक मशीनरी ने स्वतः शिकंजा कसा हो।

आकर्षक पैकेजिंग के, अकेले हिंदुत्व के दम पर, उन्हें लोकसभा चुनाव में भारी सफलता नहीं मिल सकती थी। सत्ता का यही गठबंधन मोदी के सुशासन और विकास का आधार है। शासन की अपनी सिंगल विंडो कृपा-प्रणाली को मोदी एक नारे के रूप में दोहराते आये हैं ङ्क मिनिमम गवर्नमेंट, मैक्सिमम गवर्नेंस। मिनिमम गवर्नमेंट, कार्पोरेट को जन-संसाधनों के दोहन की छूट के लिए; और मैक्सिमम गवर्नेंस, जनता को इस प्रणाली से नत्थी रखने के लिए।

यह भी स्पष्ट है कि मोदी के प्रधानमंत्री बनने से किनके दिन अच्छे आनेवाले हैं। देश के शेयर बाजार रिकार्ड-तोड़ ऊँचाई की ओर अग्रसर हैं, और भारतीय रुपया अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा विनिमय बाजार में मजबूत होता जा रहा है। 'विकास' के ये दोनों सूचक समृद्ध तबकों के सरोकार हैं न कि आम आदमी के। देर-सबेर, फिलहाल सुस्त पड़े, 'विकास' के तीसरे सूचक, रीयल स्टेट को भी इस माहौल में गर्म होना ही है - यानी आम आदमी का घर और मंहगा होगा। कार्पोरेट मीडिया भी आक्रामक अंदाज में इस तर्क की जमीन तैयार करने में लग गया है कि मुद्रास्फीति पर काबू पाने के लिए ग्रामीण रोजगार के मनरेगा जैसे खर्चों और कृषि उत्पादों के न्यूनतम समर्थन मूल्यों का तरीका बंद किया जाय। जाहिर है, मुद्रास्फीति के सन्दर्भ में, बेलगाम काला धन, उद्योगपतियों को बेहिसाब सब्सिडी और सरकार की बेतरह फिजूलखर्ची पर रोक की कवायद कांग्रेसी सरकार की तरह भाजपा सरकार में भी दिखावटी उपायों के हवाले ही रहेगी। मोदी के केन्द्रीय सत्ता में आने से टैक्स-हैवन भी, देशी और विदेशी दोनों, पूर्णतः आश्वस्त दिखते हैं; उनके हित पहले से अधिक सुरक्षित हाथों में जो हैं।

मोदी ने स्वयं को विकास का जादूगर कहा है। आखिर उनकी सत्ता से क्रोनी-कैपिटल भी आश्वस्त है और राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ भी! दोनों के आश्वस्त होने के ठोस आधार भी हैं। मोदी के ट्रैक रिकार्ड से ही आंकड़ा देखिये - विकास के गुजरात माडल के अंतर्गत मोदी ने सत्रह लाख वर्ग मीटर से अधिक सरकारी एवं अधिगृहीत जमीन कौड़ियों के मोल चहेते कार्पोरेट समूहों में बांटी है; चाहे इस याराने को निभाने में राज्य की जनता को हजारों करोड़ रुपये का चूना लगा हो। संघ भी अपने पूर्व प्रचार मंत्री की हिंदुत्व निष्ठा का फलदायी विस्फोट गुजरात में देख ही चुका है। संघ के पास यह विश्वास करने के भी भरपूर कारण होंगे कि नियति ने उन्हें सिर्फ गंगा की सफाई के लिए ही नहीं बल्कि राम मन्दिर निर्माण, समान सिविल कोड, धारा 370 व 'पिंक रिवोल्यूशन' की समाप्ति और मुस्लिम 'घुसपैठियों' को देश से बाहर खदेड़ने जैसे पुनीत कार्यों के लिए भी चुना है।

गरीबी पर मोदी का गुजरात का ट्रैक रिकार्ड क्या है? राज्य के अपने आंकड़ों के अनुसार इन बारह वर्षों में गाँवों में गरीब परिवारों की संख्या उन्तालीस प्रतिशत बढ़ी है। करीब चालीस लाख गरीबी रेखा के नीचे के परिवारों में से नौ लाख शहरों में हैं। सूची में गाँव और शहर में क्रमशः ग्यारह और सत्रह रुपया प्रतिदिन से कम कमानेवाले ही शामिल हैं, जबकि योजना आयोग के नए मानक में यह गणना क्रमशः बत्तीस और अड़तीस रुपये पर होनी चाहिए थी। गरीब पर व्यापकतम मार मंहगाई और भ्रष्टाचार की होती है। मोदी के लम्बे शासन काल में गुजरात में मंहगाई बाकी देश की तरह ही बढ़ती रही। अम्बानी की गैस के दाम को सोनिया-मनमोहन के तेल मंत्री मोइली ने चार गुणा किया तो मोदी की गुजरात सरकार ने लगभग आठ गुणा करने की अनुशंसा की। यहाँ तक कि दूध, खाद्य तेल, बिजली जैसी आम जरूरी चीजों की कीमतें स्वयं राज्य सरकार ने बार-बार बढ़ाईं। मोदी शासन के दौर में गुजरात का एक भी बड़ा नेता, वरिष्ठ अधिकारी या प्रमुख पूंजीशाह नहीं मिलेगा जिस पर राज्य की भ्रष्टाचार निरोधक मशीनरी ने स्वतः शिकंजा कसा हो। मानो मोदी के मुख्यमंत्री बनते ही चमत्कारिक ढंग से वे सभी ईमानदारी के पुतले बन गए। असली नीयत का इससे पता चलता है कि बारह वर्ष के मोदी के शासन काल में राज्य में लोकपाल का पद खाली रखा गया जबकि भ्रष्टाचार के आरोप में सजा पाया व्यक्ति कैबिनेट मंत्री बना रहा। एक अन्य मंत्री, जिसके चार सौ करोड़ के मछली घोटाले पर गुजरात उच्च न्यायालय ने रोक लगायी, भी पद पर चलता रहा और स्वयं मोदी ने उस पर मुकदमा चलाने की अनुमति देने से मना कर दिया। पारदर्शिता और तकनीकी, जिसका गाना मोदी गाते नहीं थकते, गुजरात के गिने-चुने दफ्तरों में चहेते उद्यमियों को लालफीताशाही से बचाने के लिए है, गरीब को भ्रष्टाचार की मार से दूर रखने के लिए नहीं।

अंग्रेजी उपनिवेश के कर्मचारियों के पास जनता से रिश्वत उगाही के चार रास्ते खुले थे - नजराना (पदानुसार भेंट), शुक्राना (जायज काम पर), हर्जाना (नाजायज पर) और जबराना (जबरी वसूली)। नौकरशाही का यही खेल कमोबेश आजाद भारत की तमाम सरकारों के प्रश्रय में भी चलता रहा है और गुजरात इसका अपवाद नहीं है। बस, मोदी के 'सुशासन' ने इसे एक व्यवस्थित रूप दे दिया जबकि राज्य का विजिलेंस विभाग शिकायत के थके आंकड़ों की 'विंडो-ड्रेसिंग' में व्यस्त रखा गया। कौन नहीं जानता कि राज्य में शराबबंदी के बावजूद शराब घर बैठे मिल जाती है ङ्क हजारों करोड़ की यह काली कमाई, मोदी के भी मुख्यमंत्रित्व काल में, राजनीतिकों, आबकारी विभाग, पुलिस और तस्करों में बेरोकटोक बंटती आयी है।

दुनिया में शायद ही कहीं नव-उदार पूंजीवाद और धार्मिक राष्ट्रवाद के गठबंधन से आर्थिक विकास का सफल लोकतांत्रिक माडल बना हो; पाकिस्तान जैसे सैन्यवादी माडल बेशक हैं। पूंजीशाहों को खुलकर मुनाफाखोरी करने के लिए एक विरोध रहित सामाजिक वातावरण चाहिए। जापान और दक्षिण कोरिया में समाज के पारंपरिक अनुशासन और चीन में कम्युनिस्ट पार्टी के अनुशासित ढाँचे ने यह जरूरत पूरी की है। भारत में मनमोहन सिंह बेशक नव-उदार पूंजीवाद के जनक माने जाते हों पर उनके ढुल-मुल नेतृत्व में निहायत भ्रष्ट कांग्रेसी शासन एक अस्त-व्यस्त परिदृश्य ही रहा। अब, इस हित-साधन का गुरुतर भार संघ के हिन्दुत्ववादी अनुशासन में पले-बढ़े रणनीतिकारों के जिम्मे आ गया है। गरीबों के लिए तो प्रधानमन्त्री मोदी कभी सचमुच की आशा हो ही नहीं सकते; युवाओं और स्त्रियों के लिए भी उनका शासन मृग-मारीचिका ही सिद्ध होगा।

स्त्री के सशक्तीकरण का राजनीतिक एजेंडा

विकास नारायण राय

सबसे पहले तो हमें स्वीकारना होगा कि स्त्री की सुरक्षा उसे कमजोर बना कर नहीं की जा सकती। पुराना चलन रहा है कि स्त्री को कमजोर रखो और उसके परिवार/परिवेश के मर्द उसकी सुरक्षा करें। पर इससे स्त्री सुरक्षित नहीं की जा सकी। दिसंबर 2012 के बर्बर निर्भया प्रसंग के बाद यह जिम्मा 'कठोर' एवं 'मजबूत' कानूनों के हवाले करने की प्रथा चल पड़ी है। पर स्त्री अब भी असुरक्षित है क्योंकि वह अब भी कमजोर बनाई हुई है।

यानी मर्दों या कानूनों की मजबूती से स्त्री स्वयं को सुरक्षित नहीं पा रही है। दरअसल, स्त्री की सुरक्षा के लिए जरूरी है कि स्त्री स्वयं सशक्त हो। महज कड़े कानून बनाने से यह सशक्तीकरण नहीं हो सकता। महज समाज और रोजगार में स्त्री की उपस्थिति बढ़ने से उसकी लैंगिक स्थिति मजबूत नहीं हो जाती। आज यह स्पष्ट रूप से समझा जाना चाहिए कि स्त्री के राजनीतिक सशक्तीकरण के बिना उसकी सुरक्षा संभव नहीं।

इस सन्दर्भ में दूसरा जरूरी पहलू सुरक्षा के सामंती तौर-तरीकों की विफलता का है। स्त्री सुरक्षा की दिशा में, राखी व्यवस्था या पर्दा व्यवस्था या ड्रेस-कोड या चारदीवारी/पहरेदारी, यहां तक कि पुलिस गश्त/नाकेबंदी जैसे उपायों की व्यर्थता को स्वीकार कर ही हम आगे बढ़ सकते हैं। हमें याद रखना चाहिए कि इन सामंती तौर-तरीकों से स्त्री सशक्त नहीं होती; बल्कि सामंती जीवन-मूल्य सशक्त होते हैं। स्त्री के सशक्तीकरण के लिए उसके जीवन में लोकतांत्रिक जीवन-मूल्यों, जैसे सम्पत्ति में बराबर का अधिकार, जीवन साथी के चुनाव में स्वतंत्रता, शिक्षा, कैरियर एवं मातृत्व चुनने की छूट, पारिवारिक-सामाजिक निर्णयों में भागीदारी, इत्यादि को लागू करने के रास्ते खोलने होंगे।

तीसरा महत्वपूर्ण मुद्दा बनेगा वर्तमान कानूनी प्रावधानों और प्रक्रियाओं का स्त्री के दृष्टिकोण से पुनरावलोकन का। अब तक हुआ यह है कि स्त्री सुरक्षा को लेकर बने तमाम कानूनों ने राज्य को ही सशक्त किया है, न कि स्त्री को। सजाएं बढ़ाने या पुलिस को अधिक जवाबदेह बनाने से न पीड़ित को धक्के खाने से राहत मिलती है और न आगे के लिए स्त्री-विरुद्ध अपराधों पर रोक लगने में मदद। बस

समाज में स्त्री के पारंपरिक देवी-सती-रंडी-डाइन स्टीरिओटाइप को तोड़ना, उसके सशक्तीकरण की राह का चौथा चरण होगा। स्त्री की परजीवी, पराश्रयी, उपभोग्या, कुटनी की छवि को मजबूत करनेवाले तमाम सामाजिक-सांस्कृतिक रूपों का तिरस्कार करना होगा। लोकप्रिय मीडिया माध्यमों जैसे समाचारपत्रों, पत्रिकाओं, टी वी, सिनेमा, इन्टरनेट इत्यादि पर पुरुषवादी नजरिये से स्त्री के अपमानजनक या गैर-बराबरी के चित्रण को अपराध घोषित करना होगा।

असंवेदी कानून व्यवस्था एवं न्याय व्यवस्था की मशीनरी की शक्तियों में वृद्धि हो जाती है। जबकि स्त्री के नजरिये से बने कानूनों के अंतर्गत पीड़ित को घर बैठे सहायता व राहत 'रीयल टाइम' में और न्याय व पुनर्वास समयबद्ध मिलेगा। यही नहीं, स्त्री संबंधी मामलों से जुड़नेवाले किसी भी अधिकारी/कर्मचारी के लिए लिंग-संवेदी प्रमाणित होना अनिवार्य होगा।

समाज में स्त्री के पारंपरिक देवी-सती-रंडी-डाइन स्टीरिओटाइप को तोड़ना, उसके सशक्तीकरण की राह का चौथा चरण होगा। स्त्री की परजीवी, पराश्रयी, उपभोग्या, कुटनी की छवि को मजबूत करनेवाले तमाम सामाजिक-सांस्कृतिक रूपों का तिरस्कार करना होगा। लोकप्रिय मीडिया माध्यमों जैसे समाचारपत्रों, पत्रिकाओं, टी वी, सिनेमा, इन्टरनेट इत्यादि पर पुरुषवादी नजरिये से स्त्री के अपमानजनक या गैर-बराबरी के चित्रण को अपराध घोषित करना होगा।

और अंत में जरूरी है कि स्त्री के विरुद्ध नियमित रूप से होनेवाली लैंगिक हिंसा को उसके केवल एक रूप ङ्क यौनिक हिंसा - के चश्मे से देखने का रिवाज बंद किया जाय। जो समाज बसों, कार्यस्थलों और निर्जन स्थानों में बलात्कार और छेड़-छाड़ को लेकर इतना उद्वेलित हो उठता है, वह घर-घर में रोजमर्रा के लैंगिक उत्पीड़न पर चुप्पी साधे रहता है। स्त्री के जन्म से शुरू होकर लैंगिक भेदभाव और लैंगिक हिंसा का खेल कमोबेश उसके जीवन-भर चलता ही रहता है। दरअसल यौनिक हिंसा की जड़ें लैंगिक असमानता की जमीन से ही खुराक पाती हैं। परिवार से लेकर समाज तक सिखलाई यही है कि पुरुष अपनी मर्जी को तरह-तरह से स्त्री पर थोप सकता है जिसे 'मर्यादा' और 'इज्जत' के नाम पर उसे चुपचाप सहना होता है।

क्या सम्पत्ति से वंचना, भ्रूण हत्याएं, एसिड हमले या खाप-हत्याएं किसी सामूहिक बलात्कार से कम दरिन्दगी के प्रसंग हैं? क्या हर मर्द को लैंगिक मुस्टंडा बनाकर उसका परिवार ही उसे संभावित यौन अपराधी के रूप में तैयार नहीं करता है? क्या स्त्री के पारिवारिक परवरिश को बदले बिना उसके लिए सामाजिक और कार्यस्थल का वातावरण बदला जा सकता है?

क्या भारतीय स्त्री की दुनिया ऐसे ही चलने दी जायेगी? हमारी अपनी माताओं, बहनों और बेटी-बहुओं की दुनिया! वंचना और हिंसा, अपमान और अन्याय के दंश से भरा उनका जीवन कैसे बदलेगा? इसी विमर्श से स्त्री के राजनीतिक सशक्तीकरण का उपरोक्त पांच-सूत्री एजेंडा निकलता है। इसे लागू करने के लिए ग्राम पंचायतों और स्थानीय निकायों से लेकर विधानमंडलों तक में स्त्रियाँ कम से कम दो तिहाई पहुंचनी चाहिए।